For 18 verses in English only:
www.gita-society.com/18verses-smsE.doc

For Sanskrit-Hindi only:

www.gita-society.com/18verses-smsH.pdf

This 18verses Gita "Daily Refresher" will soon be available in pocket size in all 13 major Indian languages:
Hindi, English, Sanskrit, Bengali, Telugu, Marathi, Tamil, Urdu, Gujarati, Kannada, Malayalam, Oriya, and Punjabi.
(This translation is an explanatory translation, not just exact meaning.)

योगस्थः कुरु कर्माणि, सङ्गं त्यक्त्वा धनंजय ।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा, समत्वं योग उच्यते ॥ २.४८

Do your duty to the best of your ability, O Arjuna, with your mind attached to the Lord. Give up worry for and selfish attachment to the results. Remain calm in both success and failure, because one has no control over the results. The calmness of mind is the fruit of Nishkāma-Karma-yoga. (2.48)

हे अर्जुन, परमात्मा के ध्यान और चिन्तन में स्थित होकर; स्वार्थमय आसक्ति को त्यागकर अपने कर्तव्यकर्मों का भलीभांति पालन करो. सफलता और असफलता में मन का स्थिर भाव में रहना ही कर्मयोग कहलाता है, क्योंकि कर्मफल मनुष्य के वश में नहीं है. (२.४८)

प्रकृतेः क्रियमाणानि, गुणैः कर्माणि सर्वशः।
अहंकारविमूढात्मा, कर्ताहमिति मन्यते ॥३.२७

All works are done by the forces (or Gunas) of Nature. Due to ignorance, people assume themselves to be the doer and suffer from karmic bondage. We all are just a divine instrument and should help each other. (3.27)

वास्तव में संसार के सारे कार्य प्रकृति मां के गुणरूपी परमेश्वर की शक्ति के द्वारा किए जाते हैं, परन्तु अज्ञानवश मनुष्य अपने आपको ही कर्ता समझ लेता है तथा कर्मफल की आसक्तिरूपी बंधनों से बंध जाता है. मनुष्य तो परम शक्ति के हाथ की केवल एक कठपुतली मात्र है. सहयोग दान से परमेश्वर की प्राप्ति होती है. (३.२७)

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर् , भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन ।
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि, भस्मसात् कुरुते तथा ॥४.३७

As a blazing fire reduces wood to ashes, similarly, the fire of Self-knowledge removes all our past Karma and demonic qualities. Spiritual knowledge is the best purifier. It opens up the gates of Nirvana for us. (4.37)

हे अर्जुन, जैसे अग्नि लकड़ी को जला देती है, वैसे ही ज्ञानरूपी अग्नि हमारे कर्म के बंधनों तथा सारे अवगुणों को भस्म कर मुक्ति का द्वार खोल देती है. (४.३७)

संन्यासस् तु महाबाहो, दुःखम् आप्तुम् अयोगतः ।
योगयुक्तो मुनिर् ब्रह्म, नचिरेणाधिगच्छति ॥५.०६

Samnyāsa or giving up the feeling of doership and ownership (Kartā and Bhoktā), is difficult to attain without Nishkām-Karma-Yoga (selfless service, Sevā). We are just a trustee of God-given wealth. Sevā gradually leads to Self-knowledge, faith, deep devotion, and Mukti. (5.06)

हे अर्जुन, कर्मयोग की निःस्वार्थ सेवा के बिना शुद्ध संन्यास-भाव (अर्थात् कर्मों में 'मैं और मेरापन' के भाव का त्याग) का प्राप्त होना कठिन है. सच्चा कर्मयोगी शीघ्र ही परमात्मा को प्राप्त करता है. हम धन-संपत्ति के केवल संरक्षक मात्र हैं. निष्काम-कर्मयोग की चरम सीमा आत्मज्ञान, और आत्मज्ञान का फल पराभक्ति अर्थात् मुक्ति है. (५.०६)

यो मां पश्यति सर्वत्र, सर्वं च मयि पश्यति ।
तस्याहं न प्रणश्यामि, स च मे न प्रणश्यति ॥६.३०

One who sees Me everywhere and in everything, and sees everything in Me, is not away from Me, and I am not away from him. Such a person loves all and hates no one. (6.30)

जो मनुष्य सब जगह तथा सब में मुझ सर्वव्यापी परब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्ण को ही देखता है, और सबको मुझ में ही देखता है, मैं ऐसा ब्रह्मलीन मनुष्य से अलग नहीं रहता, तथा वह भी मुझ से कभी दूर नहीं होता और वह समस्त प्राणियों को समान भाव से देखता है. (६.३०)

बहूनां जन्मनाम् अन्ते, ज्ञानवान् मां प्रपद्यते ।
वासुदेवः सर्वम् इति, स महात्मा सुदुर्लभः ॥७.१९

After many births the wise ones surrender to My will by realizing that everything is, indeed, another form of Brahman. The One has become all these. Such a great soul is very rare. (7.19)

अनेक जन्मों के बाद ब्रह्मज्ञान प्राप्तकर कि "यह सब कुछ ब्रह्मस्वरूप अर्थात् कृष्णमय है," मनुष्य मेरी शरण में आता है; ऐसा महात्मा बहुत दुर्लभ है. सब कुछ मेरा ही स्वरूप है. (७.१६)

तस्मात् सर्वेषु कालेषु , माम् अनुस्मर युध्य च ।
मय्य् अर्पितमनोबुद्धिर् , माम् एवैष्यस्य् असंशयम् ॥८.०७

Always remember Me before starting any work and do your duty. Thus you shall certainly remember Me at the time of death and come to Me if your mind and intellect are ever focused on Me. (8.07)

किसी भी काम करने के पहले श्रद्धा और भक्तिपूर्वक मेरा स्मरण करो और अपना कर्तव्य करो. सदा मेरा ही चिन्तन करो. इस तरह मुझ में लगे मन और बुद्धि के द्वारा तुम निःसन्देह मृत्युकाल में मुझे यादकर मोक्ष प्राप्त करोगे. (८.०७)

पत्रं पुष्पं फलं तोयं, यो मे भक्त्या प्रयच्छति ।
तद् अहं भक्त्युपहृतम्, अश्नामि प्रयतात्मनः॥९.२६

Whosoever offers Me a leaf, a flower, a fruit, or water with faith and devotion — even mentally; I accept and eat the offering of devotion by the faithful. (9.26)

जो मनुष्य श्रद्धा और भक्ति से पत्र, फूल, फल, जल, आदि कोई भी वस्तु — मानसिक रूपसे भी — मुझे अर्पण करता है, तो मैं उस शुद्धचित्त वाले भक्त का वह प्रेमोपहार केवल स्वीकार ही नहीं करता, बल्कि उसका भोग भी करता हूं. (९.२६)

स्वयम् एवात्मनात्मानं, वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम ।
भूतभावन भूतेश, देवदेव जगत्पते ॥१०.१५

O Creator and Lord of all, God of gods, the Supreme person, and Lord of the universe, only You know Yourself. No one can know God, the Source of creation. (10.15)

हे प्राणियों को उत्पन्न करने वाले, हे भूतेश, हे देवों के देव, जगत् के स्वामी, पुरुषोत्तम, आप ही सबकी उत्पत्ति के आदि कारण हैं, अतः आपको कोई नहीं जान सकता, केवल आप स्वयं ही अपने आपको जानते हैं.

मत्कर्मकृन् मत्परमो, मद्भक्तः सङ्गवर्जितः ।
निर्वैरः सर्वभूतेषु , यः स माम् एति पाण्डव ॥११.५५

The devotee who offers all his or her work as a worship to Me, who has detached-attachment or no deep attachment to anything, who is My devotee and depends on Me, and who is free from enmity toward any creature, reaches Me. (11.55)

जो मनुष्य अपने सम्पूर्ण कर्तव्य कर्मों को मुझे अर्पण करता है, मुझ पर ही भरोसा रखता है, मेरा भक्त है, तथा जो जल कमलवत् आसक्ति रहित (या अनासक्त आसक्त) तथा निर्वैर है, वही मुझे प्राप्त करता है. (११.५५)

श्रीभगवानुवाच --- मय्य् आवेश्य मनो ये मां, नित्ययुक्ता उपासते ।
श्रद्धया परयोपेतास्, ते मे युक्ततमा मताः॥१२.०२

Lord Krishna said: I consider the best yogis to be those devotees who worship with supreme faith by fixing their mind on My personal form. (12.02)

श्रीभगवान् बोले— जो भक्तजन अपने मन और इन्द्रियों को वश में कर, परम श्रद्धा और भक्ति से युक्त होकर मुझ परब्रह्म परमेश्वर के सगुण रूप की उपासना करते हैं, वे मेरे मत से श्रेष्ठ हैं. (१२.०२)

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यम्, अनहंकार एव च ।
जन्ममृत्युजराव्याधि-दुःखदोषानुदर्शनम् ॥१३.०८

Dislike for sensual pleasures, absence of "I and my", thinking about pain and suffering in birth, old age, disease and death leads to Self-knowledge and Nirvana. This world is called the house of misery.

इन्द्रियों के विषयों से वैराग्य, 'मैं और मेरा' का अभाव, तथा जन्म, वृद्धावस्था, रोग, और मृत्यु में दुःखरूप दोषों को बार-बार देखना ज्ञान एवं मोक्ष प्राप्ति के साधन हैं. संसार को दुःखालय कहा गया है. (१३.०८)

समदुःखसुखः स्वस्थः, समलोष्टाश्मकाञ्चनः ।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्, तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ॥१४.२४

One who is always God-conscious and depends on My will and, remains calm in pain and pleasure, censure and praise, to whom a clod, a stone, and gold are alike, and to whom the dear and the unfriendly are alike and is full of devotion, attains Me. (14.24)

जो निरन्तर आत्मभाव में रहता है तथा सुख-दुःख में समान रहता है; जिसके लिए मिट्टी, पत्थर, और सोना बराबर है; जो प्रिय-अप्रिय, निन्दा-स्तुति, मान-अपमान, तथा शत्रु-मित्र में समान भाव रखता है — वह मुझे प्राप्त करता है. (१४.२४)

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा, अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः ।
द्वन्द्वैर् विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैर् , गच्छन्त्य् अमूढाः पदम् अव्ययं तत् ॥१५.०५

Moksha is attained by those who are free from pride, desires and Moha (delusion), who have controlled the evil of attachment, who is always God conscious and remains calm in gain and loss, victory and defeat. (15.05)

जो मान, मोह आदि से निवृत्त हो चुके हैं, जिन्होंने आसक्तिरूपी दोष को जीत लिया है, जो परमात्मा के स्वरूप में नित्य स्थित हैं, और जिनकी कामनायें पूर्णरूप से समाप्त हो चुकी हैं, तथा जो सुख-दुःख आदि द्वन्द्वों से विमुक्त हो गये हैं ऐसे ज्ञानीजन उस अविनाशी परमधाम को प्राप्त करते हैं. (१५.०५)

त्रिविधं नरकस्येदं, द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्, तस्माद् एतत् त्रयं त्यजेत् ॥१६.२१

Lust (for wealth, power, and sensual pleasures), anger, and greed are the three gates of hell leading to the downfall (or reincarnation) of the individual soul. Uncontrolled sensual desire is the root of all evils and misery. Therefore, one must learn to give up these three. (16.21)

काम (अर्थात् कीर्ती, कांचन और इन्द्रिय सुख में तीव्र आसक्ति), क्रोध, और लोभ जीव को नरक की ओर ले जाने वाले तीन द्वार हैं, काम को पाप का मूल कहा गया है. इसलिए इन तीनों का त्याग करना सीखना चाहिए. (१६.२१)

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य, श्रद्धा भवति भारत ।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो, यो यच्छ्रद्धः स एव सः ॥१७.०३

The faith of each is according to one's own nature or Samskāra. One is known by one's faith. One can become whatever one wants to be (if he constantly thinks about his goal with a burning desire and deep faith in God). All we are is the result of our thoughts. (17.03)

हे अर्जुन, सभी मनुष्यों की श्रद्धा उनके स्वभाव तथा संस्कार के अनुरूप होती है. मनुष्य अपने स्वभाव से जाना जाता है. मनुष्य जैसा भी चाहे वैसा ही बन सकता है (यदि वह श्रद्धापूर्वक अपने इच्छित ध्येय का चिन्तन करता रहे). हम अपने विचारों से ही बने हैं. (१७.०३)

विषयेन्द्रियसंयोगाद् , यत् तद् अग्रेऽमृतोपमम् ।
परिणामे विषम् इव, तत् सुखं राजसं स्मृतम् ॥१८.३८

Sensual pleasures, appear as nectar in the beginning but become poison in the end, are in the mode of passion. One should not get too much attached to sense pleasures. (18.38)

इन्द्रियों के भोग से उत्पन्न सुख को — जो भोग के समय तो अमृत के समान लगता है, परन्तु उसका परिणाम विष की तरह होता है — राजसिक सुख कहा गया है. हमें ऐसे सुख में फंसना नहीं चाहिए. (१८.३८)

य इमं परमं गुह्यं, मद्भक्तेष्व् अभिधास्यति ।
भक्तिं मयि परां कृत्वा, माम् एवैष्यत्य् असंशयः ॥

One who shall study and help propagate this supreme secret philosophy to My devotees, shall be doing the highest devotional service (Bhakti) to Me, shall be very dear to Me and shall certainly come to Me. The gift of knowledge is the best gift. (18.68-69)

जो व्यक्ति गीता के इस परम गुह्य ज्ञान का पठन-पाठन द्वारा मेरे भक्तजनों के बीच प्रचार-प्रसार करेगा, वह मेरी सर्वोत्तम परा भक्ति तथा प्रिय कार्य करके निःसन्देह मुझे प्राप्त होगा. मेरा उससे ज्यादा प्यारा इस पृथ्वी पर कोई दूसरा नहीं होगा. ज्ञानदान को महादान कहा गया है. (१८.६८-६९)

contact for info: sanjay@gita-society.com

Please download, copy or use this on your web page and help us distribute (or translate these 18 verses in your local languages) the nectar of Gita as far as humans reside.